eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति

डा0 सदगुरु पुष्पम[1]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, के0 एस0 साकेत पीजी कालेज, अयोध्या, उ0प्र0, भारत

Received: 15 March 2025 Accepted & Reviewed: 25 March 2025, Published: 28 March 2025

Abstract

लोकतांत्रिक राजनीति का आधार संवाद, सहमति और सहिष्णुता है। भारत जैसे बहुलतावादी समाज में जब तक राजनीतिक दल, विचारधाराएँ और नागरिक समाज के घटक एक–दूसरे के मतों का आदर नहीं करते, तब तक लोकतांत्रिक परंपराएं सुदृढ़ नहीं हो सकतीं। यह शोधपत्र राजनीति में सहिष्णुता के घटते स्तर, संवादहीनता की बढ़ती प्रवृत्ति और उसके सामाजिकदृराजनीतिक प्रभावों का विश्लेषण करता है। साथ ही, यह सिद्ध करता है कि सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति किसी भी लोकतंत्र की आत्मा है, और इनके बिना राजनीति सिर्फ टकराव का मंच बनकर रह जाती है। यह अध्ययन ऐतिहासिक, वैचारिक और समकालीन दृष्टियों से राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

कीवर्ड– सहिष्णुता, संवाद, लोकतंत्र, राजनीतिक संवाद, असहमति, राजनीतिक संस्कृति, बहुलवाद, असहिष्णुता, वैचारिक विविधता, राजनीतिक नैतिकता

Introduction

राजनीति केवल सत्ता संघर्ष या चुनाव जीतने का माध्यम नहीं होती, बल्कि यह समाज के विभिन्न वर्गों, विचारधाराओं और आकांक्षाओं के बीच संवाद और सहअस्तित्व की प्रक्रिया है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में जब तक विविध विचारों और मतों का सम्मान नहीं होगा, तब तक राजनीतिक प्रक्रिया अधूरी मानी जाएगी। राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति का अभाव लोकतंत्र के मूल्यों पर सीधा आघात करता है। भारत जैसे विशाल और विविधताओं से परिपूर्ण देश में राजनीतिक सहिष्णुता की आवश्यकता और अधिक हो जाती है। यहाँ जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र, वर्ग आदि के अनेक आधारों पर विविधता है, और यह विविधता तभी शक्ति बन सकती है जब उसका आधार संवाद और सहिष्णुता हो। किंतु आज राजनीति में असहमति के लिए जगह सिकुड़ती जा रही है और संवाद की जगह टकराव ने ले ली है। समकालीन भारतीय राजनीति में असहिष्णुता और ध्रुवीकरण की प्रवृत्तियाँ लगातार बढ़ रही हैं। संसद से लेकर सड़क तक, मीडिया से लेकर सोशल मीडिया तक, विचारों की टकराहट अब विवाद और वैमनस्य में परिवर्तित हो रही है। ऐसे माहौल में लोकतंत्र की गरिमा, जन सहभागिता और विकास के लक्ष्य खतरे में पड़ सकते हैं। यह स्थिति केवल भारत तक सीमित नहीं है; वैश्विक लोकतंत्रों में भी संवादहीनता और असहिष्णुता की समस्या गहराती जा रही है। इस शोध में हम यह विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे कि राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति क्या है, यह क्यों आवश्यक है, और इसके अभाव के क्या परिणाम हो सकते हैं। हम यह भी देखेंगे कि भारतीय लोकतंत्र में इन मूल्यों की क्या स्थिति रही है, आज क्या चुनौतियाँ हैं, और भविष्य में इन्हें कैसे सशक्त किया जा सकता है। साथ ही, हम यह परखेंगे कि नागरिक समाज, मीडिया, शिक्षा व्यवस्था और राजनीतिक दल इस दिशा में किस प्रकार योगदान दे सकते हैं। राजनीति का उद्देश्य केवल बहुमत प्राप्त करना नहीं, बल्कि समाज में समरसता, संवाद और न्याय को बढ़ावा देना होना चाहिए।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

सहिष्णुता और संवाद वही मूलभूत मूल्य हैं जो लोकतांत्रिक राजनीति को तानाशाही, भीड़तंत्र या उन्माद से अलग करते हैं। अतः यह विषय न केवल राजनीतिक विज्ञान के क्षेत्र में, बल्कि व्यापक सामाजिक विमर्श के संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है।

शोध की परिकल्पना– किसी भी वैज्ञानिक अथवा सामाजिक शोध का मूल आधार उसकी परिकल्पना होती है। यह वह अनुमानित विचार है, जिसे शोध के माध्यम से तर्कों, तथ्यों और प्रमाणों द्वारा परीक्षण किया जाता है।

मुख्य परिकल्पना– राजनीति में यदि सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति को संरक्षित एवं सुदृढ़ नहीं किया गया, तो लोकतांत्रिक व्यवस्था में अस्थिरता, ध्रुवीकरण और सामाजिक तनाव की स्थितियाँ उत्पन्न होंगी, जिससे लोकतंत्र का मूल स्वरूप विकृत हो जाएगा।

उपपरिकल्पनाएँ–

1. राजनीतिक असहिष्णुता वैचारिक विविधता को नष्ट कर देती है, जिससे एकाधिकारवादी प्रवृत्तियाँ जन्म लेती हैं।
2. संवादहीनता लोकतांत्रिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली को प्रभावित करती है और जनता का भरोसा घटता है।
3. राजनीतिक दलों के भीतर और बीच संवाद की कमी से गठबंधन, नीति निर्माण और निर्णय प्रक्रिया प्रभावित होती है।
4. शिक्षा, मीडिया और सोशल मीडिया का व्यवहार भी राजनीतिक सहिष्णुता को प्रभावित करता है या तो सकारात्मक रूप से संवाद को बढ़ाता है या नकारात्मक रूप से ध्रुवीकरण करता है।
5. संसदीय बहस और सार्वजनिक विमर्श में सहिष्णुता का क्षरण लोकतंत्र की गुणवत्ता को घटाता है।

शोध प्राविधि– किसी भी शोध के वैज्ञानिक स्वरूप और निष्कर्ष की प्रामाणिकता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें कौन–सी पद्धति अपनाई गई है। यह शोध गुणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें द्वितीयक स्रोतों जैसे पुस्तकों, शोधपत्रों, समाचार पत्रों, रिपोर्ट्स एवं राजनेताओं के भाषणों का विश्लेषण किया गया है। कुछ अंशों में तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है, जहाँ भारतीय राजनीतिक व्यवहार की तुलना पश्चिमी लोकतंत्रों से की गई है।

शोध का प्रकार– यह शोध वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दोनों प्रकृति का है। इसमें राजनीतिक सिद्धांतों, ऐतिहासिक उदाहरणों, समकालीन घटनाओं और विचारधाराओं के संदर्भ में राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की स्थिति का विश्लेषण किया गया है।

स्रोतों का प्रकार–

(क) प्राथमिक स्रोत –

- भारतीय संविधान, संविधान सभा की बहसें
- संसद में राजनीतिक नेताओं के भाषण
- न्यायिक निर्णय (विशेष रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित)
- प्रमुख राजनेताओं (गांधी, नेहरू, अम्बेडकर आदि) के मौलिक ग्रंथ

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

(ख) द्वितीयक स्रोत –

- राजनीतिक विज्ञान की पुस्तकें
- शोध लेख एवं समीक्षात्मक निबंध
- समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ
- एनजीओ और नीति संस्थानों की रिपोर्ट
- मीडिया और सोशल मीडिया विश्लेषण

शोध उपकरण –

साहित्यिक सामग्री विश्लेषण

तुलनात्मक अध्ययन– भारत बनाम अन्य लोकतांत्रिक देशों की राजनीतिक सहिष्णुता की तुलना

वक्तव्यों का विश्लेषण– राजनीतिक वक्तव्यों और भाषणों में प्रयुक्त भाषा का विश्लेषण

मीडिया विश्लेषण– समाचार, टीवी बहस, और सोशल मीडिया पोस्ट का अध्ययन

क्षेत्रीय सीमाएँ– यह अध्ययन मुख्यतः भारत के संदर्भ में केंद्रित है, किंतु जहाँ आवश्यक हो वहाँ अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों को भी प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन की समयावधि स्वतंत्रता प्राप्ति (1947) से वर्तमान (2024) तक सीमित है।

अनुसंधान की सीमाएँ – यह शोध आंकड़ों की अपेक्षा विचारों पर आधारित है, अतः इसकी व्याख्या स्थिति के अनुसार बदल सकती है। सभी क्षेत्रों (जैसे पंचायत से लेकर राष्ट्रीय राजनीति) को समान गहराई से नहीं लिया गया है। कुछ विश्लेषण मीडिया रिपोर्टों पर आधारित हैं, जिनमें पक्षपात की संभावना रहती है।

अनुसंधान का महत्व– यह शोध वर्तमान समय में अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि वैश्विक एवं भारतीय राजनीति में असहिष्णुता, वैचारिक उग्रता, और संवादहीनता का खतरा बढ़ रहा है। यह अध्ययन न केवल राजनीतिक सिद्धांतों को स्पष्ट करता है, बल्कि सामाजिक और शैक्षिक रूप से भी नागरिकों में संवैधानिक मूल्यों की चेतना जाग्रत करने में सहायक हो सकता है।

राजनीति में सहिष्णुता, संकल्पना और ऐतिहासिक दृष्टि– सहिष्णुता (Tolerance) का शाब्दिक अर्थ है सहन करना या विरोधी विचार को भी सम्मान देना। राजनीति में सहिष्णुता का तात्पर्य है विभिन्न राजनीतिक मतों, विचारधाराओं और आलोचनात्मक दृष्टिकोणों को स्वीकारना, उनके अस्तित्व को वैध मानना और हिंसा या दमन की बजाय संवाद के माध्यम से विरोध व्यक्त करना। राजनीतिक सहिष्णुता एक लोकतांत्रिक मूल्य है, जो यह सुनिश्चित करता है कि सरकार, विपक्ष, नागरिक, मीडिया, और सामाजिक संगठनकृसब मिलकर विचारों की विविधता का सम्मान करते हुए व्यवस्था चलाएँ। लोकतंत्र की सफलता का आधार चार स्तंभों पर टिका होता है – विचारों की स्वतंत्रता, असहमति की स्वीकृति, बहस और संवाद की परंपरा, बहुलतावाद की रक्षा। यदि इन स्तंभों में से सहिष्णुता और संवाद का स्तंभ हटा दिया जाए, तो लोकतंत्र महज़ बहुमत की तानाशाही बनकर रह जाएगा। भारत में सहिष्णुता कोई आधुनिक अवधारणा नहीं है, बल्कि यह प्राचीन काल से भारतीय राजनीतिक, धार्मिक और दार्शनिक परंपराओं का आधार रही है। ऋग्वेद में कहा गया है एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति, अर्थात् सत्य एक है, परंतु ज्ञानी उसे अलग–अलग रूपों में कहते हैं। वैदिक

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

काल में यह दर्शन सहिष्णुता का मूल स्वरूप है। महात्मा बुद्ध ने मध्यम मार्ग और अहिंसा का प्रचार किया। महावीर स्वामी ने 'अनेकांतवाद' और 'सयम' के माध्यम से विविध मतों के सहअस्तित्व की बात की। सम्राट अशोक के शिलालेखों में धार्मिक सहिष्णुता, संवाद और नैतिक राजनीति की अपील स्पष्ट रूप से मिलती है। (देखें, अशोक के बारहवें शिलालेख) भक्ति और सूफी आंदोलन ने धार्मिक सौहार्द और विचारों की समानता पर बल दिया। कबीर, नानक, रहीम जैसे संतों ने कट्टरता के विरुद्ध सामाजिक संवाद का रास्ता अपनाया। महात्मा गांधी ने सत्याग्रह और संवाद की संस्कृति को राजनीतिक संघर्ष में केंद्र में रखा। नेहरू ने 'लोकतांत्रिक सेक्युलरिज़्म' और बहुलतावाद की वकालत की। डॉ. अम्बेडकर ने समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के सिद्धांतों के साथ सामाजिक सहिष्णुता को संवैधानिक अधिकारों से जोड़ा। स्वतंत्र भारत के संविधान ने सभी नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धर्म और विचार की स्वतंत्रता जैसे मौलिक अधिकार प्रदान किए। संसद और विधानसभाओं में बहस, असहमति और विरोध के अधिकार को लोकतांत्रिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग माना गया। परंतु 21वीं सदी में राजनीतिक सहिष्णुता की स्थिति दिन–ब–दिन चुनौतीपूर्ण होती जा रही है। जैसे विपक्षी नेताओं को देशविरोधी कहे जाने की प्रवृत्ति, असहमति को 'राष्ट्रद्रोह' से जोड़ना, सोशल मीडिया पर नफ़रत और ट्रोलिंग, संसद में बहस की जगह हंगामा, नीति पर चर्चा की जगह व्यक्ति पर हमले आदि। इतिहास साक्षी है कि जहाँ संवाद और सहिष्णुता रही है, वहाँ सभ्यताएँ फली–फूली हैं; जहाँ कट्टरता और असहिष्णुता हावी हुई, वहाँ समाजों का पतन हुआ। भारतीय राजनीति को यदि सशक्त, नैतिक और समावेशी बनाना है, तो प्राचीन सहिष्णु परंपरा को आधुनिक राजनीतिक व्यवहार में पुनः स्थापित करना होगा।

भारतीय लोकतंत्र और संवाद की परंपरा– भारतीय लोकतंत्र विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्रों में गिना जाता है, जिसकी जड़ें गहरी और ऐतिहासिक रूप से समृद्ध रही हैं। भारत की राजनीतिक संस्कृति में संवाद, असहमति, बहस और सहमति की प्रक्रिया को अत्यंत महत्व दिया गया है। संविधान निर्माण से लेकर संसद की कार्यवाही तक, लोकतंत्र का मूल आधार संवाद रहा है। इस अध्याय में हम भारतीय लोकतंत्र में संवाद की परंपरा को ऐतिहासिक, संस्थागत और समकालीन स्तर पर समझने का प्रयास करेंगे। भारत के संविधान का निर्माण जिस संविधान सभा द्वारा हुआ, वह संवाद की सर्वोत्तम मिसाल है। वहाँ विपरीत विचारों को स्थान मिला, असहमति का सम्मान हुआ, और गहन विमर्श के बाद सहमति बनाई गई। जैसे धर्मनिरपेक्षता, आरक्षण, संघीय ढांचा जैसे विषयों पर भी तीव्र मतभेद थे, किंतु सभी ने एक–दूसरे के विचारों को गंभीरता से सुना और विचार विमर्श किया। डॉ. अम्बेडकर, राजेंद्र प्रसाद, नेहरू, पटेल जैसे नेताओं के विचार भिन्न होने के बावजूद संवाद बना रहा। लोकतांत्रिक संस्थाओं जैसे संसद और विधानसभाएँ संवाद के सबसे प्रमुख मंच हैं। बहस में भाग लेना, विचारों को प्रस्तुत करना, बहुमत और अल्पमत दोनों को सम्मान देना संवैधानिक कर्तव्य हैं। 1950–1980 के दशक में संसद में लंबी बहसों और गंभीर संवादों की परंपरा रही। विपक्ष की बातों को सुना जाना और सरकार द्वारा उसमें सुधार करना संवाद की संस्कृति को दर्शाता था। भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था केवल संसद और विधानसभाओं तक सीमित नहीं है। पंचायती राज व्यवस्था लोकतंत्र की जड़ों तक संवाद को पहुँचाने का माध्यम है। ग्राम सभा संवाद का सशक्त मंच है जहाँ ग्रामीण नागरिक सीधा सवाल करते हैं, उत्तर मांगते हैं। यह परंपरा लोकतंत्र को 'जन से जन तक' पहुँचाने का कार्य करती है। भारत में ऐतिहासिक ग्रंथों और परंपराओं में भी संवाद की संस्कृति रही है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

समकालीन समय में संवाद की परंपरा खतरे में है। संसद में हंगामा और बहस का अवरोध, टेलीविजन बहसों में चीख–चिल्लाहट, सोशल मीडिया पर गाली–गलौच और ट्रोलिंग, जनप्रतिनिधियों के बीच आपसी संवाद का अभाव, यह स्थिति लोकतंत्र को लोकविरोधी बना सकती है। संविधान ने हमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और असहमति के अधिकार दिए हैं। यदि हम संवाद को समाप्त कर देंगे, तो असहमति से उपजी रचनात्मकता भी समाप्त हो जाएगी। ऐसे में लोकतंत्र का भविष्य संकट में पड़ सकता है। संसद में संवाद की गुणवत्ता सुधारना, राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र और संवाद, मीडिया में संयमित भाषा और सार्थक बहस, शिक्षण संस्थानों में संवाद की संस्कृति का विकास व संरक्षण किये जाने की आवश्यकता है। भारतीय लोकतंत्र की आत्मा संवाद में बसती है। जब संवाद जीवित रहता है, तभी लोकतंत्र फलता–फूलता है। जब संवाद मरता है, तो लोकतंत्र भी केवल एक औपचारिक ढांचा बनकर रह जाता है। अतः, संवाद की संस्कृति को पुनः जीवित करने की आवश्यकता आज पहले से कहीं अधिक है।

राजनीतिक विमर्श में असहिष्णुता के कारण– राजनीतिक विमर्श किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की रीढ़ होता है। यह संवाद, बहस, असहमति और समाधान का माध्यम बनता है, जो शासन व्यवस्था को समावेशी और उत्तरदायी बनाता है। परंतु वर्तमान समय में राजनीतिक विमर्श में असहिष्णुता की प्रवृत्ति चिंताजनक रूप से बढ़ी है। यह प्रवृत्ति समाज और राजनीति दोनों के लिए घातक सिद्ध हो रही है। इसके पीछे अनेक कारण कार्य कर रहे हैं। राजनीतिक दलों और समर्थकों के बीच तीव्र वैचारिक ध्रुवीकरण ने परस्पर संवाद की संभावनाओं को सीमित कर दिया है। इस ध्रुवीकरण के चलते प्रतिद्वंद्वी विचारधाराओं को शत्रु के रूप में देखा जाने लगा है। यह स्थिति बहस को रचनात्मक की बजाय टकरावपूर्ण बनाती है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे कि ट्विटर, फेसबुक, यूट्यूब आदि ने संवाद के नए मंच प्रदान किए हैं, परंतु इनका दुरुपयोग करके राजनीतिक असहिष्णुता को बढ़ावा दिया जा रहा है। ट्रोलिंग, गाली–गलौज, अफवाहें और फेक न्यूज़ राजनीतिक असहमति को वैमनस्य में बदल देती हैं। चुनावी राजनीति में जीत के लिए नैतिक सीमाओं का उल्लंघन सामान्य हो गया है। विरोधियों को अपमानित करना, निजी हमले करना, और जाति–धर्म के आधार पर ध्रुवीकरण करना अब आम रणनीति बन चुकी है। इससे विमर्श का स्तर गिरता है और असहिष्णुता को बढ़ावा मिलता है। जाति, धर्म, क्षेत्र और भाषा के आधार पर बने ऐतिहासिक असंतोष राजनीतिक दलों द्वारा पहचान की राजनीति के रूप में उपयोग किए जाते हैं। इससे बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक समुदायों के बीच अविश्वास बढ़ता है और असहिष्णुता की संस्कृति पनपती है। मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है, परंतु जब मीडिया पक्षपातपूर्ण होकर केवल एक विचारधारा या दल का पक्ष लेने लगे, तो निष्पक्ष राजनीतिक विमर्श असंभव हो जाता है। इससे न केवल असंतुलन पैदा होता है, बल्कि असहिष्णुता भी गहरी होती है। राजनीति में विचारशीलता, अध्ययनशीलता और बौद्धिक विमर्श का स्थान अब नारेबाज़ी, उत्तेजक वक्तव्यों और लोकप्रियता के पीछे भागने ने ले लिया है। यह प्रवृत्ति संवाद की संस्कृति के विरुद्ध है और असहिष्णुता को जन्म देती है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में समावेशी सोच, लोकतांत्रिक मूल्यों और आलोचनात्मक सोच को विकसित करने में विफलता भी असहिष्णुता के विस्तार में भूमिका निभाती है। यदि युवा वर्ग संवाद की महत्ता नहीं समझेगा, तो वह टकराव की राह पर ही चलेगा।

मीडिया, सोशल मीडिया और संवाद की गिरती संस्कृति– राजनीतिक संवाद की संस्कृति के क्षरण में मीडिया और सोशल मीडिया की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। जहां परंपरागत मीडिया एक समय निष्पक्ष

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

सूचनाओं, जनमत निर्माण और लोकतांत्रिक संवाद का माध्यम था, वहीं आज यह कई बार पक्षपात, उत्तेजना और ध्रुवीकरण का औजार बन गया है। इसी प्रकार, सोशल मीडिया ने संवाद को सशक्त करने के स्थान पर बहुत बार उसे विभाजित किया है। मुख्यधारा के समाचार चौनल और प्रिंट मीडिया आज राजनीतिक विचारधाराओं के अनुसार बंटते दिखते हैं। कई बार TRP की होड़ में तथ्यों की पुष्टि के बिना, उग्र भाषा में बहसों को प्रस्तुत किया जाता है। ऐसे कार्यक्रम राजनीति में असहिष्णुता को बढ़ावा देते हैं और तर्क की जगह भावनात्मक उन्माद को प्राथमिकता देते हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे फेसबुक, ट्विटर (एक्स), यूट्यूब, व्हाट्सएप आदि ने लोकतंत्र को जनसंवाद का माध्यम प्रदान किया है, लेकिन इन्हीं प्लेटफार्मों पर झूठी खबरें, ट्रोलिंग, अफवाहें और घृणात्मक भाषा का प्रयोग संवाद को विकृत कर रहा है। सोशल मीडिया का एल्गोरिदम इको चेम्बर बनाता है, जिसमें उपयोगकर्ता केवल अपनी विचारधारा से मेल खाते पोस्ट ही देखते हैं, जिससे वैचारिक विविधता खत्म होती है। राजनीतिक असहमति व्यक्त करने पर सोशल मीडिया पर ट्रोलिंग, चरित्र हनन और धमकियों का सामना करना आम होता जा रहा है। यह भय का वातावरण उत्पन्न करता है और विवेकपूर्ण तथा शालीन संवाद को हतोत्साहित करता है। विशेषकर महिला वक्ताओं, अल्पसंख्यकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं को निशाना बनाया जाता है। सोशल मीडिया पर बिना सत्यापन के खबरें वायरल होती हैं, जिनका राजनीतिक लाभ हेतु दुरुपयोग किया जाता है। इससे जनता में भ्रम, असहमति और अविश्वास की भावना उत्पन्न होती है। कई बार ऐसी खबरों के परिणामस्वरूप सांप्रदायिक तनाव भी बढ़ जाता है। मीडिया संस्थानों पर बड़े कॉर्पोरेट और राजनीतिक हितों का नियंत्रण संवाद की स्वतंत्रता और विविधता को बाधित करता है। कई बार संपादकीय स्वतंत्रता का अभाव पत्रकारिता को प्रोपेगेंडा तक सीमित कर देता है। इससे लोकतांत्रिक विमर्श में गिरावट आती है। उक्त कारकों के कारण सार्वजनिक बहसों में सहिष्णुता, सम्मान और विवेकशीलता की भावना समाप्त हो रही है। तर्क, आलोचना और बहस के स्थान पर अब उन्माद, आरोप–प्रत्यारोप और कटुता हावी हो गई है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक सहिष्णुता– राजनीतिक सहिष्णुता किसी भी लोकतांत्रिक समाज की आधारशिला होती है। जब विभिन्न विचारधाराएँ, समुदाय, एवं वर्ग एक साथ मिलकर एक साझा राजनीतिक संस्कृति में भाग लेते हैं, तो समाज अधिक समावेशी, शांतिपूर्ण और प्रगतिशील बनता है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक सहिष्णुता की आवश्यकता और उसकी चुनौतियाँ अनेक रूपों में सामने आई हैं, जो निम्नलिखित रूप में विश्लेषण की जा सकती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे बहुलतावादी लोकतंत्र में राजनीतिक सहिष्णुता की अवधारणा संविधानिक स्वतंत्रता, बहुदलीय व्यवस्था और मानवाधिकारों के संरक्षण में परिलक्षित होती है। हालांकि हाल के वर्षों में नस्लीय तनाव, डेमोक्रेट्स और रिपब्लिकन्स के बीच तीव्र ध्रुवीकरण, और ट्रम्प शासनकाल के दौरान फेक न्यूज एवं राजनीतिक असहिष्णुता का बढ़ता प्रभाव भी देखा गया है। बावजूद इसके, अमेरिका में संस्थानों की मजबूती, न्यायपालिका की स्वतंत्रता और नागरिकों की चेतना राजनीतिक सहिष्णुता के पुनर्निर्माण में सहायक रही है। यूरोपीय संघ के सदस्य देशों में सहिष्णुता को संवैधानिक मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। जर्मनी, फ्रांस और स्वीडन जैसे देशों में बहुसांस्कृतिक समाज, शरणार्थियों के अधिकार और राजनीतिक भिन्नता को स्वीकारने की प्रवृत्ति देखी जाती है। हालांकि, दक्षिणपंथी ताकतों के उभार और इस्लामोफोबिया जैसी चुनौतियाँ राजनीतिक सहिष्णुता के लिए खतरा बन रही हैं।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

अफ्रीकी देशों में जातीय संघर्ष, सैन्य तख्तापलट और लोकतांत्रिक संस्थाओं की कमजोरी राजनीतिक असहिष्णुता को जन्म देती है। वहीं, एशिया में चीन, उत्तर कोरिया और म्यांमार जैसे देशों में अधिनायकवाद के कारण असहमति का दमन किया जाता है। इसके विपरीत भारत, जापान और इंडोनेशिया जैसे देश अपेक्षाकृत अधिक लोकतांत्रिक हैं, किंतु वहाँ भी धार्मिक, भाषायी एवं जातीय विविधता के कारण तनाव उत्पन्न होते रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र, G-20, UNESCO, और विश्व आर्थिक मंच जैसे वैश्विक संस्थान विभिन्न देशों के बीच संवाद एवं सहिष्णुता को बढ़ावा देते हैं। विशेषकर जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद, वैश्विक स्वास्थ्य, और मानवाधिकारों के मुद्दों पर सहमति बनाना आज की वैश्विक राजनीति की अनिवार्यता बन चुका है। इंटरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से विश्व भर की राजनीतिक घटनाएँ अब रीयल टाइम में वैश्विक नागरिकों तक पहुँचती हैं। इससे जहां संवाद की नई संभावनाएँ खुली हैं, वहीं ट्रोलिंग, हेट स्पीच और फेक न्यूज के माध्यम से राजनीतिक असहिष्णुता भी तेजी से फैल रही है।

राजनीतिक दलों और नेताओं की भूमिका– राजनीतिक सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति को स्थापित करने एवं सुदृढ़ करने में राजनीतिक दलों और नेताओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। लोकतंत्र में राजनीतिक दल केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं होते, बल्कि वे समाज में वैचारिक चेतना और लोकतांत्रिक मूल्यों के संवाहक भी होते हैं। जब वे अपनी भाषा, व्यवहार और रणनीतियों में सहिष्णुता का प्रदर्शन करते हैं, तो वह संपूर्ण राजनीतिक परिदृश्य पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

1. दलों के घोषणापत्र और विचारधारा– राजनीतिक दलों के घोषणापत्र में यदि वैचारिक असहमति को स्थान, अल्पसंख्यकों के प्रति संवेदनशीलता और संवाद को प्राथमिकता दी जाए, तो यह लोकतांत्रिक संस्कृति को मजबूती देता है। कट्टरता, नकारात्मक राजनीति और ध्रुवीकरण को बढ़ावा देने वाले विचार, दलों के माध्यम से समाज में असहिष्णुता फैलाते हैं।

2. नेताओं के वक्तव्य और व्यवहार– राजनीतिक नेताओं के वक्तव्य जनमानस को गहराई से प्रभावित करते हैं। यदि उनके भाषणों में गरिमा, तथ्यपरकता और वैचारिक सहिष्णुता का समावेश होता है, तो वे समाज में स्वस्थ राजनीतिक संवाद को बढ़ावा दे सकते हैं। इसके विपरीत, उग्र, अपमानजनक और विभाजनकारी भाषा समाज में कटुता और तनाव का कारण बनती है।

3. चुनावी रणनीतियाँ और संवाद– चुनावी अभियानों के दौरान नेताओं और दलों को एक–दूसरे पर व्यक्तिगत हमले करने के बजाय नीतिगत बहसों को प्राथमिकता देनी चाहिए। इससे राजनीतिक संवाद की गुणवत्ता बढ़ती है और मतदाता भी मुद्दा–आधारित राजनीति के लिए प्रेरित होते हैं।

4. संसद और विधानसभा में भूमिका– राजनीतिक दलों के सांसद और विधायक जिस प्रकार संसद और विधानसभा में व्यवहार करते हैं, वह पूरे देश के लिए आदर्श बनता है। संसदीय मर्यादाओं का पालन, विपक्ष की बात को सुनना और सहमति–असहमति के साथ गरिमामय व्यवहार लोकतांत्रिक परंपराओं को सशक्त करता है।

5. युवाओं के लिए प्रेरणा– नेताओं का आचरण और विचारधारा युवा वर्ग के लिए प्रेरणा का स्रोत होती है। यदि राजनीतिक नेतृत्व सहिष्णुता, संवाद और लोकतांत्रिक मूल्यों को जीवन में उतारता है, तो देश की अगली पीढ़ी भी उसी संस्कृति में ढलती है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

6. दलों के आंतरिक लोकतंत्र की भूमिका– यदि राजनीतिक दल स्वयं अपने अंदर लोकतांत्रिक संवाद और सहिष्णुता को बढ़ावा नहीं देंगे, तो वे समाज में वैसी संस्कृति को कैसे स्थापित कर सकते हैं? उम्मीदवार चयन, नेतृत्व परिवर्तन, विचारों का आदान–प्रदान कृ इन सब में आंतरिक लोकतंत्र अनिवार्य है।

राजनीतिक दल और उनके नेता यदि लोकतंत्र को मात्र सत्ता प्राप्ति का साधन न मानकर एक नैतिक उत्तरदायित्व समझें, तो वे सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति के वास्तविक संवाहक बन सकते हैं। उनके द्वारा प्रदर्शित संवाद की शैली, सहनशीलता और विचारशीलता समाज में परस्पर सम्मान और समझ का वातावरण विकसित करती है, जो लोकतंत्र की आत्मा है।

शिक्षा, नागरिक समाज और सहिष्णुता'–

राजनीति में सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति को स्थायी और समावेशी बनाने में शिक्षा और नागरिक समाज की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। लोकतंत्र केवल शासन की एक प्रणाली नहीं है, बल्कि यह एक सतत सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षा और जागरूक नागरिक सहभागिता के माध्यम से संवाद और सहिष्णुता की नींव रखी जाती है। इसके तीन प्रमुख पक्ष हैं (1) शिक्षा प्रणाली की भूमिका, (2) नागरिक समाज की भूमिका, और (3) दोनों के संयुक्त प्रयासों से सहिष्णु लोकतांत्रिक वातावरण का निर्माण।

1. मूल्यपरक शिक्षा का अभाव– आज की शिक्षा प्रणाली में नैतिक मूल्यों, नागरिक अधिकारों और कर्तव्यों पर पर्याप्त बल नहीं दिया जाता। पाठ्यक्रमों में सह–अस्तित्व, बहुलवाद, संवाद, तर्क, तथा असहमति के अधिकार जैसे मूलभूत लोकतांत्रिक मूल्यों का समावेश अपर्याप्त है। इसका परिणाम यह होता है कि छात्र विचारधारात्मक विविधता को अपनाने के बजाय कट्टरता की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

2. आलोचनात्मक सोच का अभाव– शिक्षा संस्थानों में यदि आलोचनात्मक सोच और स्वतंत्र विचारों को बढ़ावा न दिया जाए तो युवा वर्ग राजनीतिक बहसों में उग्र, असहिष्णु या एकपक्षीय रुख अपनाता है। सहिष्णुता तभी विकसित होती है जब विद्यार्थी विविध दृष्टिकोणों को समझने और सम्मान देने के लिए प्रशिक्षित किए जाएं।

3. पाठ्यक्रमों का पुनरावलोकन– भारत जैसे विविधतापूर्ण समाज में पाठ्यक्रमों को क्षेत्रीय, सांस्कृतिक और वैचारिक विविधताओं के प्रति संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। गांधी, अम्बेडकर, विवेकानंद, नेहरू जैसे नेताओं के संवादधर्मी विचारों को शिक्षा में प्रभावी ढंग से शामिल किया जाना चाहिए।

4. सामाजिक संगठन और NGOs की भूमिका– नागरिक समाज के विभिन्न घटक जैसे सामाजिक संगठन, स्वयंसेवी संस्थाएं, मानवाधिकार कार्यकर्ता आदि, राजनीतिक संवाद की संस्कृति को सशक्त बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं। ये संस्थाएं समाज के वंचित वर्गों की आवाज को मंच देती हैं और संवाद को बहुपक्षीय बनाती हैं।

5. डिजिटल साक्षरता और संवाद– डिजिटल युग में नागरिक समाज की एक प्रमुख चुनौती यह है कि सोशल मीडिया पर संवाद को संयमित, विवेकशील और सत्यनिष्ठ रखा जाए। डिजिटल नागरिकता की अवधारणा, जिसमें जिम्मेदार ऑनलाइन व्यवहार, तथ्य–आधारित विचार और संवाद की संस्कृति को बढ़ावा दिया जाए, आज अत्यावश्यक है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

6. सामुदायिक संवाद मंचों का निर्माण– स्थानीय स्तर पर संवाद के मंच, जैसे मोहल्ला सभाएं, शांति समितियां, सार्वजनिक चर्चा मंच आदि नागरिक समाज के माध्यम से विकसित किए जा सकते हैं। ये मंच संवाद के माध्यम से असहमति के बीच पुल बनाने का कार्य करते हैं।

शिक्षा और नागरिक समाज के संयुक्त प्रयास–

1. संवाद आधारित शिक्षा मॉडल– शिक्षा संस्थानों और नागरिक समाज के साझा प्रयासों से संवाद आधारित शिक्षा पद्धति विकसित की जा सकती है, जिसमें बहस, संगोष्ठी, जनसंवाद आदि को प्रमुख स्थान मिले।

2. सहिष्णुता अभियान और कार्यशालाएं– विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में सहिष्णुता और संवाद पर आधारित विशेष कार्यशालाएं, पोस्टर अभियान और सामूहिक गतिविधियां आयोजित की जानी चाहिए।

3. नीति–निर्माण में सहभागिता– शिक्षक, विद्यार्थी और नागरिक समाज के प्रतिनिधि मिलकर नीति–निर्माण की प्रक्रियाओं में अपनी सहभागिता निभाएं जिससे सहिष्णुता और संवाद के विचार शासन के स्तर तक पहुंच सकें। शिक्षा और नागरिक समाज राजनीतिक संवाद और सहिष्णुता की नींव हैं। यदि हम शिक्षा प्रणाली को मूल्यपरक और समावेशी बनाएं तथा नागरिक समाज को सशक्त करें तो हम एक ऐसा लोकतांत्रिक समाज बना सकते हैं जिसमें मतभेद का स्थान विवाद में नहीं बल्कि संवाद में हो।

संवाद और सहिष्णुता के पुनर्स्थापन की रणनीतियाँ– राजनीतिक सहिष्णुता और संवाद की संस्कृति को पुनर्स्थापित करना आज की लोकतांत्रिक आवश्यकता बन गई है। इसके लिए विभिन्न स्तरों पर प्रयास करने की आवश्यकता हैकृव्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक और संस्थागत। निम्नलिखित रणनीतियाँ इस दिशा में सहायक हो सकती हैं–

1. राजनीतिक शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रमों का विस्तार– राजनीतिक चेतना को बढ़ाने के लिए शैक्षणिक संस्थानों में लोकतंत्र, मानवाधिकार, बहुलता, असहमति के अधिकार और विचारों की विविधता पर आधारित पाठ्यक्रमों को सम्मिलित करना अत्यंत आवश्यक है। इससे युवा नागरिक राजनीतिक विचारों को सहिष्णुता के साथ ग्रहण करना सीखेंगे।

2. पारदर्शी संवाद मंचों का निर्माण– राजनीतिक दलों, नागरिक संगठनों और शैक्षणिक संस्थानों को मिलकर ऐसे मंच तैयार करने चाहिए जहाँ विभिन्न वैचारिक मतों के बीच स्वस्थ और रचनात्मक संवाद हो सके। टीवी बहसों, पैनल डिस्कशन और सोशल मीडिया लाइव चर्चाओं को इस दिशा में संवेदनशील बनाना होगा।

3. सोशल मीडिया के लिए आचार संहिता– सोशल मीडिया पर नफरत फैलाने वाले भाषण, ट्रोलिंग और फेक न्यूज को रोकने के लिए सख्त निगरानी और जवाबदेही प्रणाली बनानी चाहिए। प्लेटफ़ॉर्म्स और सरकार को मिलकर डिजिटल नागरिकता की संस्कृति को प्रोत्साहित करना होगा।

4. राजनीतिक दलों की जवाबदेही– राजनीतिक दलों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके प्रवक्ताओं, नेताओं और समर्थकों की भाषा मर्यादित हो। असहमति का सम्मान करना, विपक्ष के विचारों को सुनना, और चुनाव प्रचार में भड़काऊ भाषणों से बचना जरूरी है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

5. सिविल सोसाइटी और मीडिया की सकारात्मक भूमिका– गैर–सरकारी संगठन, बुद्धिजीवी, लेखक, पत्रकार और सामाजिक कार्यकर्ता जन संवाद के पुल बन सकते हैं। मीडिया को केवल टीआरपी आधारित 'शोर' के बजाय, संवाद आधारित मॉडल पर काम करना चाहिए।

6. शांतिपूर्ण असहमति की संस्कृति का निर्माण– राजनीतिक असहमति को विरोध नहीं, बल्कि लोकतंत्र का एक आवश्यक पहलू मानने की मानसिकता विकसित करनी होगी। गांधीवादी मूल्यों जैसे अहिंसा, सहअस्तित्व और संवाद को सामाजिक व्यवहार का अंग बनाना होगा।

7. स्थानीय स्तर पर संवाद समितियाँ– नगरपालिकाओं, पंचायतों और वार्ड स्तर पर 'संवाद समितियाँ' बनाई जानी चाहिए, जहाँ विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक पृष्ठभूमियों के लोग नियमित रूप से मुद्दों पर चर्चा करें।

8. अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों का अनुसरण– दक्षिण अफ्रीका के ट्रूथ एंड रिकंसीलिएशन कमीशनश जैसे मॉडल से सीख लेकर भारत में भी राष्ट्रीय संवाद और सामंजस्य के प्रयास किए जा सकते हैं।

निष्कर्ष– राजनीति में सहिष्णुता और संवाद लोकतंत्र की रीढ़ हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब संवाद समाप्त हो रहा है और असहिष्णुता बढ़ रही है, तब इसकी पुनर्स्थापना लोकतंत्र की रक्षा हेतु अत्यंत आवश्यक है। केवल विरोध नहीं, बल्कि संवाद के माध्यम से समाधान ही लोकतांत्रिक राजनीति का आधार बन सकता है।

अनुशंसाएँ–

1. प्रत्येक स्तर की राजनीति में संवाद को प्राथमिकता दी जाए।
2. शिक्षा में सहिष्णुता, सहअस्तित्व और विचारमंथन को बढ़ावा दिया जाए।
3. मीडिया हाउस एवं सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स को नैतिक संवाद को प्रोत्साहित करने हेतु प्रेरित किया जाए।
4. संसद और विधानसभाओं में गरिमा और बहस की संस्कृति को पुनः स्थापित किया जाए।
5. राजनीतिक दल वैचारिक भिन्नताओं का सम्मान करना सीखें।
6. युवा संसद, जन संवाद जैसी गतिविधियों को राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ावा दिया जाए।
7. चुनाव आयोग चुनाव प्रचार के भाषाई आचरण की निगरानी करे।
8. संविधान की मूल भावना को जनदृजन तक पहुँचाया जाए।
9. धार्मिक और जातीय एकता को बढ़ाने वाले संवाद स्थापित किए जाएं।
10. नागरिक समाज संवाद और सहिष्णुता का माध्यम बने।

सन्दर्भ सूची–

गांधी, महात्मा. हिंद स्वराज. नवजीवन प्रकाशन मंडल, 1910.

जोशी, रामप्रसाद, भारतीय लोकतंत्र और राजनीतिक संस्कृति, दिल्ली नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2015।

सिंह, अजय कुमार, राजनीति में नैतिकता और सहिष्णुता, वाराणसी, सारथी पब्लिकेशन, 2018।

त्रिपाठी, नरेन्द्र, राजनीतिक सिद्धांत और व्यवहार, भोपाल लोकवाणी प्रकाशन, 2016।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 03, March 2025

शर्मा, मीनाक्षी, भारत में मीडिया और लोकतंत्र, दिल्ली प्रभात प्रकाशन, 2020।
दुबे, राकेश, भारतीय समाज और संवाद की संस्कृति, लखनऊ, नवजीवन बुक्स, 2017।
पटेल, निर्मला, सह–अस्तित्व और समरसता, अहमदाबाद नीलकमल प्रकाशन, 2014।
सिंह, धर्मेन्द्र, राजनीतिक असहिष्णुता और लोकतंत्र के संकट, दिल्ली संवाद पब्लिकेशन, 2021।
मिश्रा, आलोक, सोशल मीडिया और जनमत निर्माण, पटना यूनिक बुक्स, 2019।
अग्रवाल, अनिल कुमार, भारतीय संविधान और नागरिक चेतना, जयपुर सिद्धांत प्रकाशन, 2013।
गुप्ता, विवेक, शिक्षा, समाज और लोकतांत्रिक मूल्य, मेरठ शारदा बुक्स, 2022।
नेहरू, जवाहरलाल. भारत की खोज. नेशनल बुक ट्रस्ट, 1946.
आंबेडकर, बी. आर. जाति प्रथा का विनाश. पीपुल्स एजुकेशन सोसाइटी, 1936.
Rawls, John- Political Liberalism- Harvard University Press, 1993-
Habermas, Jurgen- The Theory of Communicative Action- Beacon Press, 1984-
Parekh, Bhikhu- Rethinking Multiculturalism- Palgrave Macmillan, 2000-
Guha, Ramachandra- India After Gandhi- HarperCollins, 2007-
Taylor, Charles- Multiculturalism and the Politics of Recognition- Princeton University Press, 1992-
नंदन, शंकरदयाल. भारतीय लोकतंत्र और सहिष्णुता. वाणी प्रकाशन, 2002.
बख्शी, पी.एम. भारतीय संविधान. ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2020.
Mehta, Pratap Bhanu- The Burden of Democracy- Penguin India, 2003-
Anderson, Benedict- Imagined Communities- Verso Books, 1983-
Chatterjee, Partha- The Politics of the Governed- Columbia University Press, 2004-
Verma, S-P- Modern Political Theory- Vikas Publishing House, 1983-
Arendt, Hannah- The Human Condition- University of Chicago Press. 1958-